दिल्ली उच्च न्यायालय: नई दिल्ली

सुरक्षित तिथि: 31 अक्टूबर, 2013
उद्घोषित तिथि: 05 दिसंबर, 2013

रि.या.(सि) 8523/2008

सेवन हेवन बिल्डकॉन्स प्राइवेट लिमिटेड व अन्य ..... याचिकाकर्ता

द्वारा: श्री अनिल के. अग्रवाल सह श्री अभय कुमार अधिवक्तागण

बनाम

डी.डी.ए. व अन्य ..... प्रत्यर्थी

द्वारा: प्रत्यर्थी सं.1/डी.डी.ए. की ओर से श्री अजय वर्मा, अधिवक्ता

कोरमः
माननीय न्यायमूर्ति श्री जी.पी. मित्तल

<u>निर्णय</u>

<u>न्या. जी. पी. मित्तल</u>

1. भारतीय संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत इस रिट याचिका के आधार पर, याचिकाकर्ता 64,21,000/- रुपए की बयाना राशि ब्याज सहित वापस चाहते हैं।

2. इस मामले के तथ्य बहुत विवादित नहीं हैं। 21.03.2008 के एक विज्ञापन के माध्यम से, डीडीए ने दिल्ली के एक प्रमुख स्थान पर 170 फ्रीहोल्ड बिल्ड-अप दुकानों/कार्यालयों के संबंध में निविदाएं आमंत्रित कीं। याचिकाकर्ता सं. 1 ने एलएससी, विकास पुरी, ब्लॉक-सी, भू-तल पर स्थित एक इकाई के संबंध में एक निविदा प्रस्तुत की। याचिकाकर्ता की 2,56,84,000/- रुपए की पेशकश सबसे अधिक थी, जिसे स्वीकार कर लिया गया। परिणामस्वरूप, बोली राशि का 25% बयाना राशि के रूप में 64,21,000/- रुपए दिनांक 27.03.2008 के ड्राफ्ट सं. 052208 के माध्यम से डीडीए के पास जमा किया गया। यह भी विवाद का विषय नहीं है कि निविदा दस्तावेज में याचिकाकर्ता सं. 1 को यह नहीं बताया गया था कि पहले बताई गई कार्यालय इकाई पिछली नीलामी का हिस्सा थी, जिसमें डाकघर के उद्देश्य हेतु कार्यालय इकाई के आरक्षण को देखते हुए सफल बोलीदाता को कार्यालय इकाई आवंटित नहीं की गई थी। दिनांक 21.04.2008 के आवंटन पत्र द्वारा, डीडीए ने बोली मूल्य की शेष राशि 1,92,63,045/- रुपए की मांग की। 26.04.2008 को लिखे पत्र के माध्यम से याचिकाकर्ता ने डीडीए को सूचित किया कि आवंटन पत्र में याचिकाकर्ता का नाम सेवन हेवन बिल्डकॉन्स प्राइवेट लिमिटेड के स्थान पर

सेवन हेवन बिल्डर्स प्राइवेट लिमिटेड के रूप में गलत उल्लेखित किया गया था। ऋण सुविधा प्राप्त करने के लिए दस्तावेज को सही करने के याचिकाकर्ता के अनुरोध पर, डीडीए ने 23.06.2008 को संशोधित पत्र सं. 3073 के माध्यम से प्रथम याचिकाकर्ता का नाम सही किया, जिसमें प्रथम याचिकाकर्ता को 30 दिनों के भीतर शेष राशि जमा करने की आवश्यकता बताई गई। डीडीए ने याचिकाकर्ता को यह भी सूचित किया कि यदि 180 दिनों की अवधि के भीतर ब्याज सहित भुगतान नहीं किया जाता है, तो आवंटन स्वतः ही रद्द हो जाएगा और ईएमडी जब्त हो जाएगी।

3. याचिकाकर्ताओं के अनुसार, प्रथम याचिकाकर्ता ने डीडीए के पास जमा की जाने वाली शेष राशि की व्यवस्था के लिए ऋण प्राप्त करने का प्रयास शुरू किया। याचिकाकर्ताओं को बहुत आश्चर्य हुआ जब याचिकाकर्ता सं. 1 को *शशि बाला नांगिया बनाम डीडीए व अन्य* अर्थात वाद सं. 1577/2009 में समन भेजा गया। उक्त सिविल वाद में यह दावा किया गया कि प्रत्यर्थी सं. 2, शशि बाला नांगिया, वादी को विद्वान सिविल न्यायाधीश के समक्ष 19.04.2000 को आयोजित नीलामी में इसी कार्यालय इकाई के संबंध में सफल बोलीदाता घोषित किया गया। उक्त सिविल वाद में यह दावा किया गया कि डीडीए ने कार्यालय इकाई को इस आधार पर निविदा से वापस ले लिया था कि इसे मुख्य पोस्ट मास्टर जनरल, दिल्ली के कार्यालय को आवंटित किया जाना आवश्यक था। सिविल वाद के साथ-साथ, प्रत्यर्थी सं. 2 (यहाँ) द्वारा अस्थायी

निषेधाज्ञा प्रदान करने के लिए सि.प्र.स. के आदेश XXXIX नियम 1 और 2 के तहत एक आवेदन भी दायर किया गया था।

4. यह विवाद में नहीं है कि प्रत्यर्थी सं. 2 के पक्ष में गुणागुण के आधार पर कोई एकपक्षीय या अंतरिम निषेधाज्ञा प्रदान नहीं की गई थी। इस प्रकार, डीडीए को वर्तमान याचिकाकर्ता के पक्ष में हस्तांतरण विलेख निष्पादित करना था।

5. पक्षकारगण का यह स्वीकार किया गया मामला है कि रिट याचिका के लंबित रहने के दौरान, उक्त सिविल वाद खारिज कर दिया गया था। प्रत्यर्थी सं. 2 विद्वान सिविल न्यायाधीश द्वारा पारित दिनांक 11.05.2012 के निर्णय के विरुद्ध प्रस्तुत अपील में भी असफल रहा।

6. याचिकाकर्ताओं का मामला यह है कि प्रत्यर्थी सं. 2 द्वारा दायर सिविल वाद के लंबित रहने के कारण याचिकाकर्ता सं. 1 को ऋण सुविधा से वंचित कर दिया गया। याचिकाकर्ताओं ने याचिकाकर्ता सं. 1 को आरवीएजी सेंचुरियन इंफ्रा सॉल्यूशंस लिमिटेड द्वारा लिखे गए दिनांक 26.09.2008 (अनुलग्नक पृष्ठ-10) के पत्र पर भरोसा किया। याचिकाकर्ताओं ने डीडीए से अनुरोध किया कि प्रत्यर्थी सं. 2 द्वारा कार्यालय/दुकानों के स्थान के आवंटन का दावा करने के लिए उठाए जा रहे विवाद के लंबित रहने के कारण शेष राशि जमा करने के लिए समय बढ़ाया जाए। समय बढ़ाने के अनुरोध को डीडीए ने

03.10.2008 के पत्र (अनुलग्नक पृष्ठ-11) द्वारा खारिज कर दिया था। याचिकाकर्ता सं. 1 को आवंटन पत्र की शर्तों के अनुसार शेष राशि जमा करने का निर्देश दिया गया था, जिसके न होने पर डीडीए आवंटन रद्द कर देगा और निविदा की शर्तों के अनुसार ईएमडी जब्त कर लेगा।

7. डीडीए द्वारा दायर जवाबी हलफनामे में बताए गए तथ्यों पर विवाद नहीं है। बल्कि, यह स्वीकार किया जाता है कि प्रत्यर्थी सं. 2 ने 19.04.2000 को कार्यालय के लिए खोले गए निविदा कार्यक्रम में भाग लिया था, जिसमें इसका उपयोग 'डाकघर' के रूप में दिखाया गया था। इसके बाद, प्रत्यर्थी सं. 2 की बोली इस आधार पर खारिज कर दी गई कि विभिन्न निविदा क्रेताओं से कई अभ्यावेदन प्राप्त हुए थे कि वे इकाई में रुचि रखते थे, लेकिन उन्होंने इसके लिए निविदा नहीं दी क्योंकि यह एक डाकघर के लिए आरक्षित थी और इस प्रकार, प्रत्यर्थी सं. 2 द्वारा जमा की गई राशि बिना किसी कटौती के वापस कर दी गई। प्रति-शपथपत्र में कहा गया है कि 34 खाली संपत्तियों, यानी 17 डाकघरों और 17 बैंकों के प्रतिबंधित उपयोग को उचित औपचारिकताओं का पालन करने के बाद 'सामान्य' कार्यालय उपयोग में बदल दिया गया था। इसके बाद, उक्त इकाइयों को 28.03.2008 को "केवल कार्यालय उपयोग" के रूप में फिर से नीलामी में रखा गया, जिसमें याचिकाकर्ता सबसे अधिक बोली लगाने वाला था। याचिकाकर्ताओं द्वारा समय विस्तार के लिए किए गए अभ्यावेदन पर डीडीए द्वारा विवाद नहीं किया गया है। यह कहा गया है कि

अभ्यावेदन की जांच करने के बाद, याचिकाकर्ता को सूचित किया गया कि वह दिनांक 21.04.2008 के मांग-सह-आवंटन पत्र के अनुसार भुगतान करने के लिए बाध्य है, अन्यथा डीडीए के पास आवंटन रद्द करने और बयाना राशि जब्त करने के अलावा कोई विकल्प नहीं होगा। सिविल वाद (मूल पक्षकार) सं. 1577/2009 में दायर दिनांक 31.05.2010 के लिखित बयान में, एक विशिष्ट दलील दी गई थी कि विवादित इकाई को "डाकघर" के उपयोग के लिए 19.04.2000 को आमंत्रित निविदा में रखा गया था और यह स्थान डाक विभाग को दिया गया था। मुख्य डाकपाल जनरल से दिनांक 11.04.2000 को एक अनुरोध प्राप्त हुआ था और यह स्थान लाइसेंस शुल्क पर डाकघर को दिया गया था। मुख्य पोस्ट मास्टर जनरल से अनुरोध किया गया कि वे आवंटन के लिए अपनी सहमति दें, लेकिन कोई प्रतिक्रिया नहीं मिली और उसके बाद डीडीए के पास खाली पड़े "बैंकों" और "डाकघर" के लिए बनाई गई इकाइयों का उपयोग योजना विभाग के परामर्श से बदल दिया गया और उन्हें आम जनता के लिए पेश किया गया। डीडीए के लिखित बयान के पैरा ख, 1,2 और 3 को नीचे उद्धृत किया गया है:

> *"B. संक्षिप्त सार:*
>
> *1. एलएससी, विकास पुरी, ब्लॉक-सी में 81.7 वर्ग मीटर की एक इकाई 19.04.2000 को आमंत्रित निविदा में जारी की गई थी। उत्तर देने वाले प्रत्यर्थी को उक्त इकाई हेतु तीन निविदाएं प्राप्त हुई थीं और श्रीमती शाही बाला नांगिया को सबसे अधिक बोली*

लगाने वाला पाया गया, जिन्होंने 15,11,000/- रुपए की राशि की पेशकश की और निविदा राशि के 25% के रूप में दिनांक 18.04.2000 के पी.ओ./डीडी सं. 514130 द्वारा 3,77,750/- रुपए बयाना राशि के रूप में जमा किए। चूँकि विवादित इकाई "डाकघर" के उपयोग के लिए निर्धारित थी तथा उत्तर देने वाले प्रत्यर्थी को डाक विभाग से कई अभ्यावेदन प्राप्त हुए थे, जिसमें कहा गया था कि वे इकाई में रुचि रखते थे, लेकिन उन्होंने इसके लिए निविदा नहीं दी थी तथा मुख्य डाकपाल, दिल्ली सर्किल से दिनांक 11.04.2000 को उक्त इकाई के आवंटन के लिए अनुरोध प्राप्त हुआ था, श्रीमती शशि बाला नांगिया की बोली/निविदा को अस्वीकार कर दिया गया था तथा इस बारे में उन्हें दिनांक 31.05.2000 के पत्र द्वारा सूचित किया गया था तथा उनके द्वारा जमा किया गया पी.ओ./डी.डी. भी वापस कर दिया गया था।

2. तत्पश्चात, मुख्य पोस्ट मास्टर जनरल को दिनांक 01.03.2002 के पत्र के माध्यम से उक्त यूनिट को डाक विभाग को 2,24,800/- रुपए प्रति वर्ष की दर से लाइसेंस शुल्क पर आवंटित करने के लिए प्रस्ताव दिया गया था, जिसमें हर वर्ष 10% की वृद्धि की जाएगी। मुख्य पोस्ट मास्टर जनरल से अनुरोध किया गया था कि वे आवंटन के लिए अपनी सहमति व्यक्त करें। लेकिन इस पर कोई प्रतिक्रिया प्राप्त नहीं हुई।

3. तत्पश्चात, डीडीए के पास खाली पड़ी "बैंकों" और "डाकघरों" के लिए बनी यूनिटों का उपयोग डीडीए के योजना विभाग से परामर्श के बाद "कार्यालय" के उपयोग में बदल दिया गया और उक्त यूनिट को 28.03.2008 को आमंत्रित निविदा के माध्यम से निपटाया गया, जो मेसर्स सेवन हेवन बिल्डकॉन प्राइवेट लिमिटेड के पक्ष में थी।

8. डीडीए द्वारा दायर लिखित बयान के पैरा 16 में, डीडीए ने कहा:

> *"16. इस पैरा के उत्तर में, यह स्वीकार किया जाता है कि वर्ष 2008 में जिस इकाई को नीलामी में रखा गया था, वही इकाई वर्ष 2000 में भी नीलामी में रखी गई थी। हालाँकि, यह प्रस्तुत किया जाता है कि डाक प्राधिकरण से कोई आवश्यकता/स्वीकृति प्राप्त नहीं होने के कारण इकाई को "कार्यालय" में उपयोग में परिवर्तित करने के बाद फिर से निविदा में रखा गया था। पिछले वित्तीय वर्ष के दौरान प्राप्त औसत नीलामी/निविदा दर के आधार पर आरक्षित मूल्य वर्ष दर वर्ष बदलता रहता है। हालांकि, इस बात से इनकार किया जाता है कि वर्ष 2008 में जिस निविदा को जारी किया गया था, उसमें पी.ओ. शब्द को "प्रोप. ऑफिस" के रूप में स्पष्ट किया गया था। हालांकि, यह स्पष्ट किया जाता है कि पी.ओ. शब्द को "प्रो ऑफिस" के रूप में स्पष्ट किया गया था, जिसका अर्थ है पेशेवर कार्यालय। इस बात से इनकार किया जाता है कि उत्तर देने वाले प्रत्यर्थी ने उसी दुकान के लिए उच्च आरक्षित मूल्य पर बोली आमंत्रित करने में दुर्भावनापूर्ण कार्य किया। यह उल्लेख करना उचित है कि वर्ष 2000 में, विवादित इकाई का उपयोग "बैंक" और "डाकघर" था, जबकि उपयोग को "कार्यालय" के रूप में बदलने के बाद, सक्षम प्राधिकारी से उचित अनुमति के बाद, वर्ष 2008 में नई निविदा में इकाई को शामिल किया गया था।"*

9. डीडीए ने दलील दी है कि प्रत्यर्थी सं. 2 द्वारा दायर सिविल वाद में सिविल न्यायालय द्वारा कोई अवरोध आदेश पारित नहीं किया गया है और इस प्रकार, डीडीए 21.04.2008 को जारी मांग पत्र के अनुसार लागू ब्याज सहित प्रीमियम का भुगतान करने पर याचिकाकर्ता को संबंधित इकाई/दुकान का कब्जा सौंपने

के लिए तैयार है। डीडीए ने आगे एक दलील दी है कि याचिकाकर्ताओं को 03.10.2008 को एक पत्र लिखा गया था जिसमें निर्धारित अवधि के भीतर 21.04.2008 के मांग-सह-आवंटन पत्र के अनुसार ₹1,92,63,045/- रुपए की शेष राशि जमा करने के लिए कहा गया था, ऐसा न करने पर आवंटन रद्द किया जा सकता था और बयाना राशि जब्त की जा सकती थी।

10. प्रत्यर्थी सं. 1 के विद्वान अधिवक्ता ने कहा कि यह नीलामी की शर्तों में से एक नहीं है कि क्रेता (यहां याचिकाकर्ता सं. 1) भुगतान करने के लिए ऋण लेने का हकदार होगा। इसे साबित करने के लिए कोई दस्तावेज रिकॉर्ड में नहीं रखा गया है। एक सफल बोलीदाता को किसी भूखंड के मालिक को भुगतान रोकने की अनुमति केवल इसलिए नहीं दी जा सकती क्योंकि किसी तीसरे व्यक्ति द्वारा कोई अनावश्यक और अनुचित मुकदमेबाजी शुरू की गई है।

11. प्रत्यर्थी सं. 2 (जो नीलामी में आरंभिक सफल बोलीदाता था) द्वारा दायर रिट याचिका के एक अलग उत्तर में, यह स्वीकार किया गया है कि डीडीए ने प्रत्यर्थी सं. 2 को सूचित किया था कि चूंकि इकाई/दुकान डाकघर के लिए निर्धारित थी, इसलिए उसने उक्त इकाई/दुकान को निविदा से वापस लेने का निर्णय लिया था और इसे मुख्य पोस्ट मास्टर जनरल, दिल्ली को आवंटित किया जाना था, जिन्होंने डाकघर खोलने के लिए उक्त स्थान का अनुरोध किया था। प्रत्यर्थी सं. 2 ने आगे यह दलील दी है कि चूंकि विवादित

दुकान/इकाई डाकघर को आवंटित नहीं की गई थी, इसलिए उसके द्वारा डीडीए और याचिकाकर्ता के खिलाफ वाद दायर किया गया था। इस प्रकार प्रत्यर्थी सं. 2 ने आरंभिक नीलामी की शर्तों और नियमों के आधार पर इकाई/दुकान उसे आवंटित करने का अनुरोध किया है।

12. याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने *एबीएल इंटरनेशनल लिमिटेड व अन्य बनाम एक्सपोर्ट क्रेडिट गारंटी कॉरपोरेशन ऑफ इंडिया लिमिटेड व अन्य, 2004 (3) एससीसी 553* का उद्धरण देते हुए आग्रह किया है कि यदि राज्य संविदा के मामले में भी मनमाने तरीके से काम करता है, तो व्यथित पक्षकार संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत रिट के माध्यम से न्यायालय का सहारा ले सकता है और न्यायालय उक्त मामले के तथ्यों के आधार पर राहत देने के लिए सशक्त है।

13. याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता द्वारा बताए गए कानून के प्रस्ताव के बारे में कोई विवाद नहीं है। *एबीएल इंटरनेशनल* में *गुजरात राज्य वित्तीय निगम बनाम लोटस होटल्स प्राइवेट लिमिटेड, (1983) 3 एससीसी 379* पर भरोसा करते हुए, पैरा 11 में सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नानुसार टिप्पणी की:-

> *"11. गुजरात राज्य वित्तीय निगम बनाम लोटस होटल्स (प्राइवेट) लिमिटेड (1983) 3 एससीसी 379 के मामले में इस न्यायालय ने रमना दयाराम शेट्टी बनाम भारतीय अंतर्राष्ट्रीय हवाई अड्डा प्राधिकरण (1979) 3 एससीसी 489 में पहले के निर्णय का अनुसरण करते हुए अभिनिर्धारित किया:*

राज्य का साधन जो अनुच्छेद 12 के तहत 'अन्य प्राधिकारी' होगा, वह दूसरे पक्षकार के प्रतिकूल किसी गंभीर वचन का उल्लंघन नहीं कर सकता है जिसने उस वचन या वादे पर काम किया है और खुद को नुकसानदेह स्थिति में डाल सकता है। राज्य वित्तीय निगम अधिनियम के तहत बनाया गया अपीलार्थी निगम अनुच्छेद 12 में 'अन्य प्राधिकरण' की अभिव्यक्ति के अंतर्गत आता है और यदि वह इस तरह के वादे से पीछे हटता है, तो यह नहीं कहा जा सकता है कि पीड़ित पक्षकार के लिए एकमात्र उपाय उल्लंघन के लिए हर्जाने के लिए वाद करना होगा और वह निगम को अनुच्छेद 226 के तहत संविदा के विशिष्ट प्रदर्शन के लिए मजबूर नहीं कर सकता है।"

14. अब विचारणीय प्रश्न यह है कि क्या डीडीए ने पूर्णतः मनमाने तरीके से कार्य किया है तथा क्या याचिकाकर्ता को इस रिट याचिका के आधार पर राहत प्रदान की जा सकती है।

15. यह विवाद का विषय नहीं है कि प्रत्यर्थी सं. 2 (यहाँ) द्वारा डीडीए के विरुद्ध एक सिविल वाद दायर किया गया था तथा याचिकाकर्ता को उक्त सिविल वाद में प्रत्यर्थी सं. 2 के रूप में पक्षकार बनाया गया था। प्रत्यर्थी सं. 2 ने उक्त सिविल वाद में कथित नीलामी को रद्द करने की राहत मांगी थी। यह भी विवाद का विषय नहीं है कि उक्त सिविल वाद में याचिकाकर्ता के पक्ष में हस्तांतरण के निष्पादन से डीडीए के विरुद्ध कोई अवरोध आदेश नहीं दिया गया था। उक्त सिविल वाद के साथ-साथ प्रथम अपील को भी सक्षम न्यायालयों द्वारा खारिज कर दिया गया है तथा मामला अंतिम रूप ले चुका है।

16. *हरियाणा वित्त निगम व अन्य बनाम राजेश गुप्ता, एआईआर 2010 एससी 338* और *मोहम्मद गाजी बनाम मध्य प्रदेश राज्य व अन्य (2000) 4 एससीसी 342* पर भरोसा करते हुए याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता श्री अनिल के. अग्रवाल ने तर्क दिया है कि जहां विक्रेता बिक्री योग्य शीर्षक को हस्तांतरित करने में असमर्थ है, वह क्रेता द्वारा शेष बिक्री प्रतिफल का भुगतान करने से इनकार करने पर बयाना राशि जब्त करने का हकदार नहीं है।

17. दूसरी ओर, प्रत्यर्थी सं. 1 डीडीए के विद्वान अधिवक्ता श्री अजय वर्मा ने *अग्रवाल एसोसिएट्स (प्रमोटर्स) लिमिटेड बनाम डीडीए एवं अन्य, 69 (1997) डीएलटी 716 (डीबी)* में इस न्यायालय के खंड न्यायपीठ के निर्णय पर भरोसा किया है ताकि उनकी दलील को पुष्ट किया जा सके कि डीडीए हमेशा से ही एक वैध शीर्षक हस्तांतरित करने और याचिकाकर्ता को संबंधित दुकान का कब्जा देने के लिए तैयार था और याचिकाकर्ता द्वारा भुगतान की गई बयाना राशि नीलामी की शर्तों के उल्लंघन के कारण जब्त कर ली गई थी।

18. *हरियाणा वित्त निगम* (एचएफसी) में 08.01.1998 को, एचएफसी ने मेसर्स यूनिक ऑक्सीजन प्राइवेट लिमिटेड, ओल्ड हांसी रोड, जींद की भूमि सहित विभिन्न इकाइयों की बिक्री के लिए एक विज्ञापन जारी किया था। प्रत्यर्थी राजेश गुप्ता ने उसी दिन बयाना राशि के रूप में 2.5 लाख रुपए जमा करवा दिए थे। उक्त राजेश गुप्ता ने 21.01.1998 को फैक्ट्री परिसर का दौरा करने पर पाया कि परिसर में सड़क से कोई उचित रास्ता नहीं है और इसलिए उन्होंने

21.01.1998 को एक पत्र लिखकर एचएफसी को इस बारे में अवगत कराने का अनुरोध किया ताकि उन्हें प्रस्ताव के अनुसार इकाई प्राप्त करने में किसी भी समस्या का सामना न करना पड़े। एचएफसी ने उक्त पत्र का जवाब नहीं देना पसंद किया। 19.02.1998 को एक पत्र द्वारा, एचएफसी ने बातचीत के लिए राजेश गुप्ता को बुलाया और बोली राशि 25 लाख रुपए से बढ़ाकर 50 लाख रुपए कर दी। राजेश गुप्ता ने दिनांक 07.03.1998 को पुनः एक पत्र लिखा, जिसमें फैक्ट्री में ट्रक के गुजरने के लिए स्वीकृत/अधिकृत मार्ग के बारे में वही मुद्दा उठाया गया। यह रिकॉर्ड में है कि दिनांक 03.04.1998 के पत्र द्वारा एचएफसी के शाखा प्रबंधक ने राजेश गुप्ता की आपत्ति को प्रधान कार्यालय के संज्ञान में लाया था। प्रधान कार्यालय द्वारा शाखा प्रबंधक को सूचित किया गया कि ऋण प्राप्त करने के समय चूककर्ता इकाई द्वारा प्रस्तुत दस्तावेजों के अनुसार इकाई को एक स्पष्ट मार्ग प्रदान किया गया था। 13.04.1998 को शाखा प्रबंधक ने एचएफसी के प्रधान कार्यालय को एक और पत्र लिखा, जिसमें फैक्ट्री के क्षेत्र और मार्ग में विसंगतियों को इंगित किया गया। तथ्यात्मक स्थिति के बावजूद, एचएफसी ने दिनांक 18.05.1998 को प्रत्यर्थी को एक पत्र जारी किया, जिसमें उसे 15 दिनों के भीतर शेष बोली राशि जमा करने की सलाह दी गई, अन्यथा बयाना राशि बिना किसी और नोटिस के जब्त कर ली जाएगी। प्रत्यर्थी ने 12.06.1998 को हिसार में एचएफसी द्वारा आयोजित ओपन हाउस में मार्ग के संबंध में फिर से मुद्दा उठाया। एचएफसी ने राजस्व

अधिकारियों की दिनांक 27.06.1998 की सीमांकन रिपोर्ट पर भरोसा किया (जो बोली के बाद बनाई गई थी कि इकाई के पश्चिम में 16.5 फीट मार्ग प्रदान किया गया है)। रिपोर्ट से संतुष्ट न होने पर, प्रत्यर्थी ने शेष राशि का भुगतान नहीं किया, जिसके बाद एचएफसी ने प्रत्यर्थी द्वारा जमा की गई 2.5 लाख रुपए की राशि जब्त कर ली और उसके बाद भूमि की बिक्री के लिए नई निविदाएं आमंत्रित कीं, जिसे पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायालय के समक्ष चुनौती दी गई।

19. *हरियाणा वित्त निगम* के तथ्य स्पष्ट रूप से अलग-अलग हैं। उस मामले में प्रत्यर्थी ने 08.01.1998 को 2.5 लाख रुपए की बोली राशि जमा की थी। उन्होंने 21.01.1998 को कारखाने के दौरे पर अपनी टिप्पणियों पर 29.01.1998 को एक पत्र लिखा। एचएफसी ने प्रत्यर्थी द्वारा उठाए गए संदेहों का कोई जवाब नहीं दिया और इसके बजाय उसे 19.02.1998 को एक पत्र द्वारा बातचीत के लिए आमंत्रित किया और इस प्रकार बातचीत पर, बोली राशि 25 लाख रुपए से बढ़ाकर 50 लाख रुपए कर दी गई। यह केवल प्रत्यर्थी राजेश गुप्ता ही नहीं थे जिन्होंने बातचीत के लिए बुलाए जाने से पहले मार्ग के बारे में चिंता जताई थी और बोली राशि बढ़ाई गई थी, बल्कि एचएफसी के शाखा प्रबंधक ने भी वास्तविक मार्ग और रिकॉर्ड में विसंगतियों को इंगित किया था। इन परिस्थितियों में सर्वोच्च न्यायालय ने पाया कि एचएफसी ने अनुचित तरीके से काम किया है और अपनी गलतियों का फायदा उठाने की

कोशिश कर रहा है। परिणामस्वरूप, जब्ती को रद्द करने का निर्णय पारित किया गया।

20. इसी प्रकार, *मोहम्मद गाजी* में, 1995 सत्र के तेंदू लीव्स के निपटान हेतु निविदाएं आमंत्रित करने हेतु एक निविदा सूचना 20.11.1995 को मध्य प्रदेश राज्य द्वारा जारी की गई थी। प्रत्यर्थी सं.4 ने लॉट सं. 597 सहित विभिन्न लॉट के संबंध में अपनी निविदा पेश की और 02.12.1995 को उक्त लॉट के लिए उसे सबसे अधिक बोली लगाने वाला घोषित किया गया। अन्य बोलीदाताओं द्वारा की गई कुछ शिकायतों तथा मध्य प्रदेश राज्य के अधिकारियों की ओर से हेराफेरी के आरोपों के कारण, प्रत्यर्थी सं. 4 की उच्चतम बोली स्वीकार नहीं की गई तथा दिनांक 27.01.1996 के आदेश द्वारा उसकी निविदा रद्द कर दी गई। उपर्युक्त लॉट के लिए निविदाओं हेतु नवीन नोटिस दिनांक 20.15.1996 को जारी किया गया, जिसमें अपीलार्थी मोहम्मद गाजी को सर्वोच्च बोलीदाता घोषित किया गया। इस बीच, प्रत्यर्थी सं. 4 ने दिनांक 27.01.1996 के निरस्तीकरण आदेश तथा दिनांक 23.05.1996 के पुनः निविदा नोटिस को चुनौती देते हुए उच्च न्यायालय में रिट याचिका दायर की। अंतरिम राहत प्रदान करने के उनके अनुरोध पर, उच्च न्यायालय ने दिनांक 18.06.1996 के आदेश द्वारा अंतरिम निर्देश जारी कर मध्य प्रदेश राज्य को नवीन निविदा नोटिस के अनुसरण में कोई भी कदम उठाने से रोक दिया। अपीलार्थी मोहम्मद गाजी को उक्त रिट याचिका में पक्षकार/प्रत्यर्थी के

रूप में शामिल नहीं किया गया था। उन्हें मध्य प्रदेश राज्य के अधिकारियों से एक पत्र मिला, जिसमें उन्हें दिनांक 01.19.1996 के पत्र में दर्शाई गई शेष सुरक्षा राशि जमा करने के बाद वन संरक्षक के साथ निविदा नोटिस के खंड 7(2) के अनुसार एक क्रय संविदा निष्पादित करने के लिए कहा गया था। परिणामस्वरूप, अपीलार्थी ने सुरक्षा राशि के रूप में 2,68,217.72 रुपए जमा किए। अपीलार्थी ने प्रत्यर्थी सं. 4 द्वारा दायर रिट याचिका में हस्तक्षेप के लिए एक आवेदन भी दायर किया, जिसे 01.04.1997 को खारिज कर दिया गया। प्रत्यर्थी सं. 4 द्वारा दायर रिट याचिका का निपटारा उच्च न्यायालय के विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा दिनांक 27.01.1996 के आदेश को निरस्त करते हुए किया गया था, जिसके तहत प्रत्यर्थी सं. 4 द्वारा जमा की गई बयाना राशि को जब्त करने का निर्देश दिया गया था और प्रत्यर्थी सं. 4 को बयाना राशि वापस करने का निर्देश जारी किया गया था। उपर्युक्त रिट याचिका के निपटारे के बाद, अपीलार्थी ने दिनांक 24.04.1997 के अपने पत्र द्वारा प्रत्यर्थी सं. 2 और 3 से ₹2,68,271.72P की सुरक्षा राशि वापस करने का अनुरोध किया।

21. माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने तथ्यों पर गौर करने के बाद निम्नलिखित निर्णय दिया:-

> *"3. मामले के तथ्य जो ऊपर उल्लिखित विधि के प्रश्नों के निर्धारण को जन्म देते हैं, वे हैं कि 1995 सत्र के लिए तेंदू पत्तों के निपटान के लिए निविदा आमंत्रित करने हेतु निविदा सूचना प्रत्यर्थी राज्य द्वारा 20-11-1995 को जारी की गई थी। प्रत्यर्थी 4 ने लॉट 597*

सहित विभिन्न लॉटों के संबंध में अपनी निविदा पेश की और 20-12-1995 को उक्त लॉट के लिए उसे सबसे अधिक बोली लगाने वाला घोषित किया गया। अन्य बोलीदाताओं द्वारा की गई कुछ शिकायतों और प्रत्यर्थी अधिकारियों की ओर से कथित हेराफेरी के कारण प्रत्यर्थी 4 की सबसे अधिक बोली को स्वीकार नहीं किया गया और दिनांक 27-1-1996 के आदेश द्वारा उसकी निविदा रद्द कर दी गई। उपरोक्त लॉट के लिए निविदाओं हेतु नई सूचना 20-5-1996 को जारी की गई जिसमें अपीलार्थी को सबसे अधिक बोली लगाने वाला घोषित किया गया। इस बीच, प्रत्यर्थी 4 ने 27-1-1996 के टेंडर को रद्द करने के आदेश और 23-5-1996 के पुनः टेंडर नोटिस को चुनौती देते हुए उच्च न्यायालय में रिट याचिका सं. 2147/1996 दायर की। उन्होंने इस सीमा तक अंतरिम राहत के लिए भी प्रार्थना की कि 20-5-1996 के नए टेंडर नोटिस के अनुसार प्रत्यर्थी अधिकारियों को कोई नया समझौता करने से रोका जाए। उच्च न्यायालय ने 18-6-1996 के आदेश के तहत प्रत्यर्थी अधिकारियों को नए टेंडर नोटिस के अनुसार कोई भी कदम उठाने से रोकने के लिए अंतरिम निर्देश जारी किया। यह ध्यान देने योग्य है कि अपीलार्थी को उपरोक्त रिट याचिका में पक्षकार-प्रत्यर्थी के रूप में शामिल नहीं किया गया था। उन्हें प्रत्यर्थी 1 से 3 अधिकारियों से एक पत्र मिला जिसमें उन्हें 1-9-1996 के पत्र में दर्शाई गई शेष सुरक्षा राशि जमा करने के बाद वन संरक्षक के साथ निविदा नोटिस के खंड 7(2) के अनुसार खरीद समझौते को निष्पादित करने के लिए कहा गया था। परिणामस्वरूप, अपीलार्थी ने सुरक्षा राशि के रूप में 2,68,217.72 रुपए जमा किए। अपीलार्थी ने प्रत्यर्थी 4 द्वारा दायर रिट याचिका में हस्तक्षेप के लिए एक आवेदन भी दायर किया जिसे 1-4-1997 को खारिज कर दिया गया था। प्रत्यर्थी 4 द्वारा दायर रिट याचिका का निपटान उच्च न्यायालय के विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा दिनांक 27-1-1996 के आदेश को निरस्त करके किया गया था, जिसके तहत प्रत्यर्थी 4 द्वारा जमा की गई बयाना राशि को जब्त करने का निर्देश दिया गया

था और प्रत्यर्थी 4 को बयाना राशि वापस करने का निर्देश जारी किया गया था। उक्त रिट याचिका के निपटारे के बाद अपीलार्थी ने प्रत्यर्थी 2 और 3 से अनुरोध किया कि वह अपने पत्र दिनांक 24-4-1997 के माध्यम से अपनी सुरक्षा राशि 2,68,217.72 रुपए वापस करें। उसने दलील दी कि तेंदू पत्ता, जो एक नाशवान वस्तु है, पहले ही नष्ट हो चुका है और सड़ चुका है, जिसके परिणामस्वरूप समय बीतने के साथ उसका मूल्य बेकार हो गया है। उसने सुरक्षा राशि पर 18% ब्याज के लिए भी प्रार्थना की, जिसे अपीलार्थी की कोई गलती न होने पर प्रत्यर्थी अधिकारियों द्वारा अवैध रूप से रोक लिया गया था। अपीलार्थी द्वारा यह तर्क दिया गया है कि उसके पत्र दिनांक 24-4-1997 के बाद प्रत्यर्थी 2 ने दिनांक 10-4-1997 को एक पूर्व-दिनांकित पत्र भेजा, जिसमें अपीलार्थी को 10-5-1997 तक संविदा निष्पादित करने और शेष निविदा मूल्य को चार किस्तों में जमा करने का निर्देश दिया गया, जैसा कि उसमें विस्तृत रूप से बताया गया है। यह आशंका करते हुए कि अधिकारी उसकी बयाना राशि जब्त कर सकते हैं और उसे काली सूची में डाल सकते हैं, अपीलार्थी को बाध्य होकर उच्च न्यायालय में रिट याचिका सं. 1934/1997 दाखिल करनी पड़ी, जिसमें 1-4-1997 के आदेश को निरस्त करने तथा बयाना राशि के साथ-साथ क्षतिपूर्ति के रूप में दावा की गई 10 लाख रुपए की राशि वापस करने की प्रार्थना की गई। उसने आगे प्रार्थना की कि उसे 19-6-1996 के पत्र के अनुसरण में समझौता करने के लिए बाध्य न किया जाए। उच्च न्यायालय के विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा 10-12-1997 को रिट याचिका को अनुमति दी गई तथा प्रत्यर्थी 1 से 3 को अपीलार्थी को सुरक्षा राशि तत्काल वापस करने का निर्देश दिया गया। विद्वान एकल न्यायाधीश के आदेश से असंतुष्ट प्रत्यर्थी 1 से 3 ने उच्च न्यायालय की खंड न्यायपीठ के समक्ष लेटर्स पेटेंट अपील दायर की, जिसे इस अपील में दिए गए आदेश के अनुसार आंशिक रूप से अनुमति दी गई।

4. यह विवादित नहीं है कि प्रत्यर्थी 4 द्वारा अपीलार्थीगण को पक्षकार बनाए बिना शुरू किए गए वाद के कारण, उसे प्रत्यर्थी अधिकारियों द्वारा उसकी निविदा सूचना की स्वीकृति का लाभ लेने से रोका गया। इस बात से भी इनकार नहीं किया जा सकता कि तेंदू पत्ते एक नाशवान वस्तु है। अपीलार्थी को उसकी कोई गलती न होने पर भी तेंदू पत्ते एकत्र करने से रोका गया, जिसके लिए उसने अपनी सुरक्षा राशि जमा की थी। यह ध्यान देने योग्य है कि जब प्रत्यर्थी 4 द्वारा दायर रिट याचिका को उच्च न्यायालय के विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा आंशिक रूप से अनुमति दी गई थी, तब प्रत्यर्थी अधिकारियों ने लेटर्स पेटेंट अपील दायर नहीं की थी।

5. अपीलार्थी द्वारा दायर रिट याचिका सं. 1934/1997 में, उच्च न्यायालय के विद्वान एकल न्यायाधीश ने तथ्यों के आधार पर अभिनिर्धारित किया:

"इन परिस्थितियों को देखते हुए, इस न्यायालय को यह मानने में कोई हिचकिचाहट नहीं है कि पक्षकारगण के बीच संविदा विफल हो गयी है। प्रत्यर्थी याचिकाकर्ता को उसके द्वारा उद्धृत मूल्य पर तेंदू पत्ता खरीदने या उठाने के लिए बाध्य करने के हकदार नहीं हैं। प्रत्यर्थी निविदा प्रस्तुत करने के समय याचिकाकर्ता से प्राप्त धन को वापस करने के लिए बाध्य हैं। यदि प्रत्यर्थी 4 के कृत्यों के कारण प्रत्यर्थीगण को कोई नुकसान होता है, तो वे कानून द्वारा अनुमति दिए जाने पर क्षतिपूर्ति की वसूली के लिए सक्षम न्यायालय के समक्ष उचित कानूनी कार्यवाही करने के लिए स्वतंत्र हैं। याचिका स्वीकार की जाती है। कोई लागत नहीं।"

6. एलपीए का निपटारा करते हुए खंड न्यायपीठ ने यह भी पाया कि अपीलार्थी को तेंदू पत्ता न उठाने के लिए जिम्मेदार नहीं ठहराया जा सकता और इस तरह उसने निविदा की किसी भी शर्त का उल्लंघन नहीं किया है। यह पाते हुए कि राज्य भी किसी उल्लंघन के लिए

जिम्मेदार नहीं है, खंड न्यायपीठ ने इक्विटी के आधार पर आक्षेपित आदेश पारित करने का निर्णय किया। अपीलार्थी की ओर से खंड न्यायपीठ के समक्ष पेश की गई दलीलें कि उसकी ओर से कोई गलती नहीं थी क्योंकि उसने बोली लगाई थी और तेंदू पत्ता लेने के लिए तैयार था जिसे वह स्थगन आदेश के कारण नहीं उठा सका, खंड न्यायपीठ द्वारा गलत नहीं पाई गईं। खंड न्यायपीठ ने कहा कि "विद्वान अधिवक्ता का प्रस्तुतीकरण गलत नहीं लगता है"। चूंकि राज्य को भी गलती के लिए जिम्मेदार नहीं ठहराया जा सकता है, इसलिए खंड न्यायपीठ ने निर्देश दिया कि अपीलार्थी की बयाना राशि से 30,000 रुपए की राशि काट ली जाए। अपीलार्थी के पक्ष में दिए गए तथ्यों के निष्कर्षों को देखते हुए उच्च न्यायालय का ऐसा निर्देश कायम नहीं रह सकता।"

22. मेरे विचार में ऊपर उद्धृत प्राधिकारी वर्तमान मामले के तथ्यों पर लागू नहीं होते हैं और इसलिए याचिकाकर्ताओं के लिए कोई मदद नहीं कर सकते हैं।

23. दूसरी ओर, यह मामला अग्रवाल एसोसिएट्स में इस न्यायालय के खंड न्यायपीठ के निर्णय द्वारा पूरी तरह से कवर किया गया है, जहां याचिकाकर्ता ने इस आधार पर शेष बिक्री प्रतिफल जमा करने से इनकार कर दिया था कि एमसीडी और डीडीए के बीच कुछ विवाद था। खंड न्यायपीठ ने विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा पारित आदेश को बरकरार रखते हुए कहा कि डीडीए केवल याचिकाकर्ता द्वारा बोली राशि का शेष 75% जमा करने पर संपत्ति का कब्जा देने के लिए बाध्य था, और अभिनिर्धारित किया कि याचिकाकर्ता यह मामला पेश करना चाहता था कि डीडीए याचिकाकर्ता को कब्जा देने की स्थिति में

नहीं था, जो केवल एक दिखावा था। इस मामले में भी, पहली निविदा में यूनिट/दुकान केवल डाकघर के लिए पेश की गई थी, जबकि दूसरी निविदा (विवाद में) में यूनिट/दुकान एक सामान्य दुकान (पेशेवर कार्यालय) के रूप में पेश की गई थी। डिवीजन बेंच ने इस बात पर विस्तार से विचार किया कि बोली की राशि क्या है, बयाना राशि क्या है और इस तरह की राशि जमा करने के क्या परिणाम है, और इसे कब जब्त किया जा सकता है। अग्रवाल एसोसिएट्स में दिए गए निर्णय के पैरा 2 से 7 नीचे उद्धृत किए गए हैं:-

> *"2. विद्वान अधिवक्ता श्री वशिष्ठ ने कहा कि डीडीए संपत्ति का कब्जा देने की स्थिति में नहीं था, इसलिए याचिकाकर्ता द्वारा शेष 75% राशि का भुगतान न करना पूरी तरह से उचित था। डीडीए को 7,50,000/- रुपए की राशि जब्त करने का कोई अधिकार नहीं है। डीडीए के विद्वान अधिवक्ता ने कहा कि नीलामी की शर्तों में जब्ती का प्रावधान है और याचिकाकर्ता ने नीलामी नोटिस की शर्तों के अनुसार काम नहीं किया, डीडीए हमेशा संपत्ति का कब्जा सौंपने के लिए तैयार था और वास्तव में याचिकाकर्ता ने 16.4.1994 के पत्र द्वारा शेष राशि के भुगतान के लिए 45 दिनों का समय बढ़ाने का अनुरोध किया था। प्लॉट का कब्जा हमेशा डीडीए के पास था और नीलामी की शर्तों के खंड 2(viii) के अनुसार, नीलामी रद्द की जा सकती थी और डीडीए बयाना राशि जब्त करने का आदेश पारित करने का हकदार था।*
>
> *3. दिल्ली विकास प्राधिकरण बनाम गृहस्थापना कोऑपरेटिव ग्रुप हॉउसिंग सोसायटी लिमिटेड, 1995 पूरक (1) एससीसी 751 में डीडीए के राशि जब्त करने के अधिकार के प्रश्न पर विचार*

करने के लिए सर्वोच्च न्यायालय के पास एक अवसर था। सर्वोच्च न्यायालय द्वारा देखे गए तथ्य इस प्रकार हैं:

> *"अपीलार्थी ने द्वारका फेज-1 में लगभग 260 कॉपरेटिव ग्रुप हॉउसिंग सोसायटी सहित नरेला में लगभग 60 ऐसी समितियों को भी भूमि आवंटित करने का प्रस्ताव दिया। जब पहली बार 1.10.1990 को प्रस्ताव बनाया गया था, तो द्वारका भूमि के लिए लागत 975/- रुपए प्रति वर्ग मीटर और नरेला भूमि के लिए 950/- रुपए निर्धारित की गई थी। आवंटन भूमि में रुचि रखने वाली समितियों को बयाना राशि के रूप में 5 लाख रुपए जमा करने और आवंटन के लिए औपचारिक रूप से आवेदन करने की आवश्यकता थी। इच्छुक समितियों द्वारा प्रस्ताव स्वीकार करने पर, अपीलार्थी के दिनांक 25.1.1991 की सूचना द्वारा औपचारिक आवंटन किया गया। भूमि पर कब्जा दिए जाने से पहले, अपीलार्थी ने दिनांक 3.11.1992 की अपने सूचना द्वारा कहा कि भूमि का प्रीमियम 1650.65 रुपए प्रति वर्ग मीटर की दर से देय होगा। जो भारत सरकार द्वारा दिनांक 21.10.1992/23.10.1992 की अधिसूचना के तहत निर्धारित मूल्य था। कुछ समितियों ने प्रीमियम में वृद्धि से व्यथित होकर दिल्ली उच्च न्यायालय का सहारा लिया। उच्च न्यायालय ने अंततः वृद्धि को बरकरार रखा, जिसका निर्णय 26 दिल्ली प्रकाशित निर्णय 156 में प्रकाशित किया गया है। उच्च न्यायालय के निर्णय के विरुद्ध विशेष अनुमति याचिकाओं के माध्यम से इस न्यायालय का सहारा लिए जाने पर, प्रथम किश्त के भुगतान की समय सीमा 31.5.1993 तक बढ़ा कर उसका निपटान किया गया, जिसकी तिथि उच्च न्यायालय द्वारा 30.4.1993 निर्धारित की गई थी। इस न्यायालय ने अपने आदेश में*

स्पष्ट किया कि ब्याज सहित प्रथम किश्त के भुगतान की सुविधा केवल 31.7.1993 तक ही उपलब्ध होगी; तथा इस तिथि से आगे कोई समय विस्तार नहीं दिया जाएगा।"

प्रत्यर्थीगण द्वारा सर्वोच्च न्यायालय के आदेशानुसार राशि का भुगतान न करने पर डीडीए ने 5 लाख रुपए की राशि जब्त कर ली, जो आवंटन आदेश दिनांक 3.11.1992 के खंड 4 II के अनुसार बयाना राशि के रूप में देय थी। इसे इस न्यायालय के समक्ष चुनौती दी गई और इस न्यायालय ने डीडीए को कोई कटौती न करने का निर्देश दिया तथा डीडीए को पूरी राशि वापस करने का निर्देश दिया। इसे सर्वोच्च न्यायालय के समक्ष चुनौती दी गई।

4. सर्वोच्च न्यायालय ने डीडीए की ओर से प्रस्तुत किए गए निवेदन को निम्नलिखित शब्दों में उल्लेख किया:

"पहले कानूनी प्रस्ताव के समर्थन में, श्री जेटली ने हमें मुख्य रूप से हनुमान कॉटन मिल्स बनाम टाटा एयर क्राफ्ट लिमिटेड, 1969) 3 एससीसी 522 में इस न्यायालय के तीन न्यायाधीशों की न्यायपीठ के निर्णय का हवाला दिया, जिसमें इस बात पर विस्तृत चर्चा की गई है कि बयाना राशि का क्या अर्थ है और इस तरह की राशि जमा करने के क्या परिणाम हैं और इसे कब जब्त किया जा सकता है। न्यायपीठ ने निर्णय में उल्लिखित विभिन्न निर्णयों की समीक्षा करने के बाद, जिसमें चिरंजीत सिंह बनाम हर स्वरूप, एआईआर 1926 पीसी 1 में प्रिवी काउंसिल द्वारा दिए गए निर्णय भी शामिल हैं, पृष्ठ 139 पर 'बयाना' के संबंध में निम्नलिखित सिद्धांत निकाले: (एससीसी पृष्ठ 531, पैरा 21)

"(1) इसे उसी समय दिया जाना चाहिए जिस समय संविदा संपन्न हुई हो।

(2) यह गारंटी दर्शाता है कि संविदा पूरी की जाएगी या दूसरे शब्दों में, संविदा को बांधने के लिए बयाना दिया जाता है।

(3) यह लेनदेन किए जाने पर खरीद मूल्य का हिस्सा होता है।

(4) यह तब जब्त हो जाता है जब खरीदार की चूक या विफलता के कारण लेनदेन विफल हो जाता है।

(5) जब तक संविदा की शर्तों में इसके विपरीत कुछ न हो, खरीदार द्वारा की गई चूक पर, विक्रेता बयाना जब्त करने का हकदार है।"

5. *सोसायटी, जो सर्वोच्च न्यायालय के समक्ष प्रत्यर्थी थी, ने तर्क दिया:*

"उपर्युक्त कानूनी स्थिति को देखते हुए, प्रत्यर्थीगण के लिए श्री विश्वजीत भट्टाचार्य द्वारा प्रस्तुत तर्क यह है कि 3.11.1992 को दिए गए प्रस्ताव को स्वीकार नहीं किया गया था, जिसमें प्रीमियम की दर 1650.65 रुपए होने का उल्लेख किया गया था। इसलिए, विद्वान अधिवक्ता के अनुसार, अपीलार्थी बयाना राशि जब्त करने का हकदार नहीं है, क्योंकि प्रस्ताव की स्वीकृति के प्रतीक के रूप में इस तिथि के बाद ऐसी कोई राशि जमा नहीं की गई थी।"

6. *सर्वोच्च न्यायालय ने माना कि जमा की गई 5 लाख रुपए की राशि डी.डी.ए. द्वारा जब्त की जा सकती है और इस न्यायालय के निर्णय को उलट दिया गया।*

7. *सर्वोच्च न्यायालय द्वारा निर्धारित यह कथन है कि संविदा के किसी एक पक्षकार द्वारा जब्ती के अधिकार के प्रश्न पर विचार करने के लिए पक्षकारगण के बीच सहमत शर्तों पर विचार किया जाना चाहिए।"*

24. चूंकि बयाना राशि जब्त करना निविदा के नियमों के अनुसार था, इसलिए याचिकाकर्ता इस बारे में कोई शिकायत नहीं कर सकता।

25. यह सच है कि दिनांक 26.09.2008 के पत्र द्वारा, आरवीएजी सेंचुरियन इंफ्रा सॉल्यूशंस लिमिटेड ने याचिकाकर्ता को सूचित किया कि उपर्युक्त संपत्ति के संबंध में मुकदमेबाजी के कारण याचिकाकर्ता के 150 लाख रुपए के ऋण प्रस्ताव के अनुरोध पर विचार नहीं किया जा सका, हालांकि, तथ्य यह है कि यह प्रस्ताव की शर्तों में से एक नहीं था कि सफल बोलीदाता किसी भी वित्तीय संस्थान से ऋण प्राप्त करने का हकदार होगा। चूंकि, याचिकाकर्ता ने बोली की शर्तों का उल्लंघन किया है, इसलिए प्रत्यर्थी निविदा के नियमों के अनुसार बयाना राशि जब्त करने का हकदार था।

26. इस प्रकार, रिट याचिका किसी भी गुणागुण से रहित है और तदनुसार इसे खारिज किया जाता है।

27. लंबित आवेदन, यदि कोई हो, का भी निपटान किया जाता है।

(जी.पी.मित्तल)

न्यायधीश

05 दिसंबर, 2013

पीएसटी/वीके

(Translation has been done through AI Tool: SUVAS)

अस्वीकरण : *देशी भाषा में निर्णय का अनुवाद मुकद्द्मेबाज़ के सीमित प्रयोग हेतु किया गया है ताकि वो अपनी भाषा में इसे समझ सकें एवं यह किसी अन्य प्रयोजन हेतु प्रयोग नहीं किया जाएगा/ समस्त कार्यालयी एवं व्यावहारिक प्रयोजनों हेतु निर्णय का अंग्रेज़ी स्वरूप ही अभिप्रमाणित माना जाएगा और कार्यान्वयन तथा लागू किए जाने हेतु उसे ही वरीयता दी जाएगी।*